# इकाई 2 पुरुरवा-उर्वशी, यम-यमी, सरमा-पणि, विश्वामित्र-नदी संवाद सूक्त का स्वरूप व वैशिष्ट्य

**इकाई की रूपरेखा**


2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 पुरुरवा-उर्वशी संवाद सूक्त

2.3 यम-यमी संवाद सूक्त

2.4 सरमा-पणि संवाद सूक्त

2.5 विश्वामित्र-नदी संवाद सूक्त

2.6 सारांश

2.7 शब्दावली

2.8 सन्दर्भ-ग्रन्थ

2.9 बोध प्रश्न


## 2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप-

- वेद-वाङ्मय के सामान्य ज्ञान से परिचित हो सकेंगे।
- वेद के प्रमुख संवादों का सुचारु ज्ञान हो सकेगा
- प्रवाहमय संवाद में मनोरंजन के साथ उपदेशात्मकता का ज्ञान हो सकेगा।
- समर्थ व्यक्ति के साथ जरूरतमंद व्यक्ति का विनम्र सम्भाषण सीख सकेंगे।
- संवाद के पात्रों में "परस्पर देवो भव" की भावना का ज्ञान प्राप्त होगा।
- संवाद- सूक्तों के स्वरूप एवं वैशिष्ट्य का ज्ञान हो सकेगा।
- व्यवहार में पग-पग पर उपयोग में आने वाले उपदेशों का परिज्ञान होगा।

## 2.1 प्रस्तावना

ऋग्वेद विश्वसाहित्य में प्राचीनतम होने के साथ सर्वसम्मति से सम्मानित सद् ग्रन्थ है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद सम्पूर्ण विश्व की अमूल्य निधि है। ज्ञान, विज्ञान, कला, साहित्य, दर्शन प्रभृति जैसे महत्त्वपूर्ण विषयों के मुख्य स्रोत ये वेद ही हैं। इन्हीं की बदौलत भारतीय संस्कृति को वैदिक संस्कृति कहलाने का गौरव प्राप्त है। भारतीय संस्कृति की आत्मा वेदों में ही निहित है। धार्मिक दृष्टि से वेद सर्वाधिक महत्त्वशाली हैं। सनातन धर्म के आधारभूत ग्रन्थ वेद हैं

जिन्हें भारतीय परम्परा में अपौरुषेय माना जाता है। वेद वह ईश्वरीय ज्ञान है जो हमारे पूर्वज ऋषियों को ऋतम्भरा प्रज्ञा से साक्षात्कार के द्वारा प्राप्त हुआ।

वेद के अन्तर्गत संवाद-सूक्त सर्वाधिक उपयोगी है। संवाद के मनोहारी श्रवण-मात्र से अपने परिवार, समाज, दूरदेश एवं प्रयोजन-सिद्धि के सन्दर्भ में किस तरह से व्यवहार किया जाना चाहिए इसका सहज सुगम बोध हमें प्राप्त होता है। अध्येता को इसके अध्ययन से प्रमुख संवाद सूक्तों का परिचय एवं उसके वैशिष्ट्य का परिज्ञान प्राप्त होगा।

## 2.2 पुरुरवा-उर्वशी संवाद सूक्त : (ऋग्वेद - 10/95)

**मण्डल = 10 सूक्त = 95 कुल मन्त्र = 18**
**ऋषि = पुरुरवा ऐल और उर्वशी देवता = उर्वशी और पुरुरवा ऐल**
**छन्द = त्रिष्टुप स्वर = धैवत**

ऋग्वेद के दशम मण्डल में पुरुरवा उर्वशी संवाद का रोचक प्रसंग है। कला की दृष्टि से यह अतिशय मनोरम, सरस एवं भावपूर्ण होने के साथ उपदेशप्रद भी है। कथोपकथन की प्रधानता होने के कारण इसे संवाद कहा जाता है।

पुरुरवा-उर्वशी संवाद का प्रारम्भिक अंश ऋग्वेद में अप्राप्त है। अतः उसकी पूर्ति 'बृहद्देवता" (7/147-157) नामक ग्रन्थ से की जाती है। तदनुसार, पुरुरवा मानव राजा हैं और उर्वशी एक अप्सरा है। पुरुरवा के साथ उर्वशी चार वर्षों तक पृथ्वी पर रहकर उन्हें छोड़कर चली गई। राजा उसे खोजते हुए एक सरोवर पर पहुँचे। वहाँ जाकर राजा ने देखा कि उर्वशी अन्य अप्सराओं के साथ क्रीड़ा कर रही थी। तब राजा और उर्वशी के मध्य कथोपकथन रूप से यह संवाद होता है।

आइये, अब हम 'बृहदेवता' पर आधारित संवाद के प्रारंभिक अंश को समझते हैं- प्राचीन काल की बात है उर्वशी नाम की अप्सरा पुरुरवा नामक राजर्षि के साथ नियमपूर्वक लोक धर्म में प्रवृत होकर सहवास कर रही थी। इस सहवास से इन्द्र के हृदय में ईर्ष्या होने लगी। परिणामस्वरूप उसने अपने पास बैठे वज्र से कहा। यदि मैं मेरा प्रिय चाहो तो उन दोनों का प्रेम तोड़ दो। 'ऐसा ही होगा' यह कहते हुए वज्र ने अपनी माया से पुरुरवा-उर्वशी का प्रेम तोड़ दिया। तब उर्वशी से वियुक्त होकर पुरुरवा पागल की तरह इधर-उधर भटकने लगा।

भटकते हुए उस पुरुरवा ने एक सरोवर में पाँच समान रूप वाली सहेलियों के साथ उर्वशी को देखा। कातर दृष्टि से देखते हुए उसने उर्वशी को पुनः अपने पास आने के लिये बार-बार अनुरोध किया। किन्तु उर्वशी ने दुःख के साथ राजा को उत्तर दिया- "अब मैं तुम्हारे लिये अप्राप्य हूँ। तुम मुझे पुनः स्वर्ग में प्राप्त करोगे।"

**"तामाह पुनरेहीति दुःखात्सा त्वब्रवीन्नृपम्।**
**अप्राप्याऽहं त्वयामेह स्वर्गे प्राप्स्यसि मां पुनः।।"**

(बृहदेवता 7/152)

'बृहद्देवता ग्रन्थ' में प्रतिपादित इस वृत्तान्त कथा की सम्पूर्ति ऋग्वेद संवाद-सूक्त से की जाती है। जो इस प्रकार है-

पुरुरवा उर्वशी द्वारा स्वर्ग में मिलने की बात को सुनकर स्तब्ध रह जाता है। कुछ क्षण बाद वह

उर्वशी से अनुनय करते हुए कहता है कि "तुम अपने मन को अनुरागी बनाओ। हम शीघ्र ही परस्पर वार्तालाप करें। यदि हम इस समय मौन रहेंगे तो आने वाले दिनों में सुखी नहीं होंगे।"

यह सुनकर उर्वशी ने कहा "हे पुरुरवा! अब वार्तालाप से कोई लाभ नहीं। जैसे वायु को बाँधा नहीं जा सकता, उषा को रोका नहीं जा सकता, वैसे ही तुम अब मुझे नहीं पा सकते। अब तुम अकेले घर लौट जाओ।"

वार्तालाप का क्रम आगे बढ़ता है। पुरुरवा उर्वशी से कहता है कि "मैं तुम्हारे वियोग में इतना सन्तप्त हूँ, कि अपने तूणीर से बाण निकालने में भी असमर्थ हो रहा हूँ। अब न तो मैं युद्ध जीत सकता, न गायों का संग्रह कर सकता, मैं राजा के कर्तव्य से स्वयं ही विमुख हो चुका हूँ। ऐसी स्थिति में मेरे सैनिक भी कार्यहीन हो गए हैं।"

राजा के विलाप को सुनकर उर्वशी ने पुरुरवा से कहा "मैं जब से तुम्हारे घर आयी तबसे तुमने मेरे हर तरह के सुख का ख्याल रखा। मुझे किसी सपत्नी (सोत) से कोई प्रतिस्पर्धा नहीं हुई क्योंकि मैं तुमसे हर प्रकार से सन्तुष्ट थी।"

तदनन्तर, अधीर होता हुआ पुरुरवा, उर्वशी से कहता है- "तुम अन्तरिक्ष की विद्युत् के समान आभा वाली हो। मेरी सभी अभिलाषाओं को पूर्ण करती रही हो। अब तुम अपने द्वारा उत्पन्न मेरे पुत्र को दीर्घजीवी बनाओ।" यह सुनकर उर्वशी ने पुरुरवा से कहा "तुमने पृथ्वी की रक्षा के लिये पुत्ररत्न चाहा था। वह पृथ्वी का रक्षक होगा पर मैं तुम्हारे पास नहीं रहूँगी। तुम अधीरता को त्यागो, व्यर्थ वार्तालाप छोडो और प्रजापालन के कार्य से विमुख मत होओ।"

अब पुरुरवा ने पुनः अनुरोध किया कि "कोई भी सद् गृहस्थ पारस्परिक प्रेम के बन्धन को तोड़ना स्वीकार नहीं कर सकता। तुम्हारे स्वसुर के घर में श्रेष्ठ आलोक (गर्भस्थ-शिशु) के रूप में जगमगा उठा है। जब वह जन्म लेगा और तुम उसके साथ नहीं रहोगी तो उसके रुदन को हम सह सकेंगे?"

पुरुरवा के उक्त वचन को सुनकर उर्वशी ने कहा- "मैं तुम्हारे पुत्र को तुम्हारे पास भेज दूंगी। सदैव उसकी मंगलकामना करूँगी। अतः मेरा पुत्र तुम्हारे पास आकर रोएगा नहीं। अब घर को लौट जाओ।"

पुनः अधीर होता हुआ पुरुरवा उर्वशी से कहता है- "मैं अब पृथ्वी पे गिर पड़ा हूँ। दुर्गति में फँस कर मृत्यु को प्राप्त हो सकता हूँ। अब इस शरीर का भक्षण भेड़िया आदि हिंसक पशु करेंगे।" यह सुनकर उर्वशी ने कहा "तुम गिरो मत। अपनी मृत्यु की इच्छा मत करो। स्त्रियों और भेड़ियों का हृदय एक समान कठोर होता है। उनकी मित्रता स्थायी नहीं होती।" ऐसा सुनकर पुरुरवा ने कहा "तुम मुझसे दूर मत जाओ। मैं तुम्हारे साथ रहूँ। मेरा हृदय तुम्हारे बिना जल रहा है। अतः लौट आओ।"

इस प्रकार कातर होते हुए पुरुरवा से विलग होती उर्वशी ने अनिवार्य नियोग को सहन करने का परामर्श दिया। साथ ही उसने यह अनुरोध किया कि सभी देवगण तुम्हें आशीर्वचन प्रदान कर रहे हैं कि तुम मृत्यु को वश में कर लोगे तथा यज्ञ में हविष् अर्पण कर देवताओं को प्रसन्न करोगे। जीवन के सभी उत्तम सुखों का भाग करते हुए पूर्णायुष्य जीवन के अनन्तर स्वर्ग में आनन्दपूर्वक वास करोगे।

इस प्रकार, सान्त्वना वचन के साथ उर्वशी ने पुरुरवा से उसके साथ आनन्दपूर्वक सहवास का स्मरण कराते हुए कहा- "चार वर्षों तक मैं विविध रूप धारण कर मनुष्यों में विचरण करती रही, प्रतिदिन एक बार घृत पान करती हुई मैं सदा आनन्द में आपके साथ रही, फिर स्वर्ग में हम मिलेंगे।"

**"यद्विरूपाचरं मर्त्ये स्ववसं रात्रीः शरदश्चतस्रः।**
**घृतस्य स्तोकं सकृदह्न आश्ना तादेवेदं तातृपाणा चरामि॥"**

(ऋग्वेद 10/95/16)

**"इति त्वा देवा हम आहुरैल यथे-मेतद् भवसि मृत्युबन्धुः।**
**प्रजा ते देवान् हविषा यजाति स्वर्ग उ त्वमति मादयासे॥"**

(ऋग्वेद 10/95/18)

## 2.3 यम-यमी का संवाद (ऋग्वेद 10/10)

**ऋषि = यमी वैवस्वती, यम वैवस्वत देवता = यम वैवस्वत, यमी वैवस्वती**
**छन्द = त्रिष्टुप स्वर = धैवत**

ऋग्वेद के दशम मण्डल में यम-यमी संवाद का रोचक प्रसंग है। कला की दृष्टि से यह अतिशय मनोरम एवं सरस होने के साथ आर्य आचरण का उपदेश प्रदान करता है। स्वच्छन्द विचार को पूर्वपक्ष में रखकर, शास्त्रीय एवं लौकिक आर्य विचार को सिद्धान्त पक्ष में रखकर, कला को विवेक के साथ समन्वित करना इस संवाद का मूल उद्देश्य है।

प्रस्तुत संवाद 14 ऋचाओं में उपवर्णित है। विवस्वत की दो सन्तान हैं- यम एवं यमी। ये दोनों जुड़वाँ भाई-बहन हैं। किशोरावस्था प्राप्त करने पर यमी अपने मनोगत भाव को अपने भाई यम के समक्ष प्रदर्शित करती है। अपनी कुत्सित कामवासना को अविचारित रूप से प्रकट करती हुई वह निर्लज्ज निवेदन करती है। भाई यम विवेक-सम्मत आर्य-पक्ष का प्रतिनिधित्व करता है। अपने घर से दूर समुद्र के मध्य द्वीप में भाई के साथ उपस्थित वह, निर्जन देश में सहवास की कामवासना से आहत होकर अपना विवेक खो बैठती है। इस कारण यमी अपने भाई यम के साथ सहवास द्वारा पुत्र उत्पन्न करने का प्रस्ताव रखती है। यह सुनकर भाई यम यमी से कहता है-

"तुम मेरी सहोदरा बहन हो। अतः तुम्हारे साथ मेरा सहवास होना सर्वथा वर्जित है। हम दोनों के अतिरिक्त यहाँ अन्य व्यक्ति नहीं हैं यह समझ तुम्हारी अज्ञता है। क्योंकि द्युलोक को धारण करने वाले प्रजापति के पुत्रगण यहाँ भी प्रत्यक्ष रूप से सब कुछ देख रहे हैं। अतः अनुचित वासना एवं विचार का परित्याग करो।"

**"न ते सखा सख्यं वष्ट्येतत् सलक्ष्मा यद्विपुरुषा भवति।**
**महत्पुत्रासो असुरस्य वीरा दिवो धर्तार उर्विया परिख्यन्॥"**

- (10/10/2)

उपर्युक्त प्रकार से राम द्वारा समझाए जाने पर भी यही अनार्थ विचार को पुनः प्रस्तावित करती है- "यदि मनुष्य के लिए भाई-बहन का संसर्ग निषिद्ध है तो भी देवता लोग इच्छापूर्वक ऐसा

संसर्ग करते हैं। अतः मेरी इच्छानुकूल तुम पुत्रजन्मदाता पति के समान मेरा संभोग करो"-

**"उशन्ति घा ते अमृतास एत्देवस्य चित् त्यज मर्त्यस्य।**
**नि ते मनो मनसि धारयस्मे जन्युः पतिस्तन्वमा विविश्याः।।"**

- (10/10/13)

यह सुनकर सत्यवक्ता यम ने विवेक एवं युक्ति के द्वारा सदाचार का उपदेश करता हुआ अपनी बहन से कहता है "हम दोनों के महान् पिता आदित्य हैं और पतिव्रता सरण्यू हमारी माता हैं। हम दोनों सहोदर होने से पति पत्नी का सम्बन्ध किसी हालत में स्थापित नहीं कर सकते। वह केवल शास्त्रविरुद्ध ही नहीं, आपितु लोकविरुद्ध भी है।

उपर्युक्त प्रकार से समझाए जाने पर भी यमी, एकान्त स्थान को अपनी स्वेच्छाचारिता के लिए उपयुक्त बताती हुई पति-पत्नी की तरह शयन व सहवास करने को प्रेरित करती है। यह सुनकर आर्य यम देवों के गुप्तचर को सर्वत्र उपस्थित बताते हैं तथा दुःखदायिनी यमी को कठोर वाणी से तिरस्कृत करते हैं।

यम स्पष्ट रूप से अपने लोक व शात्र सम्मत विवेकपूर्ण विचार की पुष्टि के लिए सूर्य के तेजोमय आशीर्वचन की कामना करते हैं और यमी से दो टूक बताते हैं कि अपने भाई यम के अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष को अपने पति रूप में वरण करो-

**"रात्रीभिरस्मा अहभिर्दशस्येत् सूर्यस्य चक्षुर्मुहुरुन्युमीयात्।**
**दिवा पृथिव्या मिथुना सबन्धू यमीर्यमस्य विभृयादजामि।।"**

- (10/10/29)

जब पुनः यमी यम से कहती है- "हाय हाय यम! तुम बहुत दुर्बल हो। जैसे अन्य स्त्री तुम्हें अनायास आलिंगन कर सकती है वैसे वृक्ष को लता की तरह मैं तुम्हारा आलिंगन क्यों नहीं कर सकती? "

यह सुनकर यम यमी से उसके द्वारा कही गई युक्ति से ही बहन को समझाता हुआ कहता है- "जैसे मैं बहन से आलिंगन नहीं करता, कोई दूसरी ही स्त्री लता की तरह, वृक्ष सदृश मुझे आलिंगन कर सकती है, उसी प्रकार तुम लता की तरह गुझसे भिन्न किसी अन्य पुरुष का आलिंगन करो। अपने सहवास हेतु मुझसे सर्वथा विमुख हो जाओ तथा अपने सहवास का प्रबन्ध किसी अन्य पुरुष के साथ करो। इसी में मंगल होगा।"

**"अन्यमू षु त्वं यम्यन्य उ त्वां परिववजाते लिबुजेव वृक्षम्।**
**तस्य वा त्वं मन इच्छा स वा तवाथा कृणुवव संविनं सुभद्राग्।।"**

- (10/10/14)

प्रस्तुत यम-यमी संवाद आपाततः अत्यन्त गर्हित एवं इषित प्रतीत होता है तथापि इस संवाद से भव्य उपदेश की प्राप्ति होती है-

1. दिवस-रात्रि, सुबह-शाम, धर्म एवं देवगण सदा हम मानवों के आचरणों का अवलोकन करते रहते हैं। अतः हमें कभी भी धर्म एवं सदाचार से लुत नहीं होना चाहिए।
2. अशिष्टाचार का अणु मात्र भी ग्रहण नहीं करना चाहिए। तद्वत् शिष्टाचार का पूर्णतः पालन करना चाहिए, अणुमात्र भी परित्याग नहीं करना चाहिए।

## 2.4 सरमा-पणि संवाद (ऋग्वेद - 10/108)

**ऋषि = पणि, सरमा देवता = सरमा, पणि**

**छन्द = त्रिष्टुप स्वर = धैवत**

ऋग्वेद के 11 मन्त्रों में सरमा-पाणि संवाद कलात्मक रोचक शैली में प्राप्त है। यह संवाद उच्च कोटि के आदर्शों से आपूरित है। इस संवाद में आर्यों के शत्रु पाणिगण हैं जो अपने ऐश्वर्य-मद में चूर रहते हैं।

वे आर्यों की गाएँ चुरा लेते हैं और उन्हें रसा नदी के पार द्वीप में छिपा कर रख लेते हैं। परिणामस्वरूप गो के बिना घृत आदि के अभाव में याज्ञिक कार्यों में बाधा उपस्थित होती है। इस बाधा को दूर करने हेतु आर्यों के नेता इन्द्र सरमा नामक दूती को पणियों के पास भेजते हैं। वह पणियों से गाएँ लौटाने का अनुरोध करती है। पणिगण सरमा की अनसुनी करते हुए उसे प्रलोभित करना चाहते हैं।

पणिगण ने सरमा से पूछा "तुम किस उद्देश्य से इस स्थान पर पहुँची हो? रसा नदी के जल को तुमने कैसे पार किया? सरमा ने पणिगण से कहा मैं इन्द्र के द्वारा भेजी गई उसकी दूती हूँ। तुम लोगों ने आर्यों की गायों को सुदूर द्वीप में लाकर छिपा रखा है। उन गायों को आर्यों के पास पहुंचाना मेरा अभीष्ट है। इन्द्र की दूती समझकर रसा नदी के जल ने मुझे पार करने में सहयोग किया।

**"इन्द्रस्य दूतीरिषिता चरामि मह इच्छन्ती पणयो निधीन्वः।**
**अतिष्कदो भियसा तन्न आव तथा रसाया अतरं पयांसि।।"**

- (10/108/2)

तदनन्तर पुनः पणिगण ने सरमा से कहा, "तुम जिसकी टूटी हो वह इन्द्र कैसा है? उसकी दृष्टि कैसी है? यदि वह आता है तो हम उसे मित्र बनाकर गायों का संरक्षक बना देंगे।"

यह सुनकर सरमा ने कहा- "मैं जिसकी दूती हूँ उसको कोई कष्ट नहीं पहुँचा सकता। वह अपने विरोधियों को पराजित कर कष्ट देता है। उसके डर से नदियाँ उसे मार्ग दे देती हैं। हे पणिगण! वह इन्द्र जब यहाँ पहुँचेंगे तब तुमलोगों का संहार कर देंगे।"

**"इमा गावः सरमे या ऐच्छः परिदिवो अन्तान्तसुभगे पहन्ती।**
**कस्त एना अव सृजादयुध्वयुतास्माकमायुधा सन्ति तिग्मा।।"**

उपर्युक्त मन्त्र द्वारा पणिगण ने सरमा को प्रत्युत्तर देते हुए कहा, "हमारे शस्त्र अत्यन्त तीक्ष्ण हैं। इन्द्र या कोई भी अन्य व्यक्ति मुझे हमें पराजित नहीं कर सकता। अतः गायों को ले जाने की इच्छा कभी भी तुम पूरी नहीं कर सकती।"

यह सुनकर सरमा ने पणिगण से कहा- "तुम्हारे वचन शस्त्र के आघात से सुरक्षित हो सकते हैं, तुम्हारे पास पहुंचने का मार्ग भी अगम्य हो सकता है। किन्तु बृहस्पति तुम्हें कभी क्षमा नहीं कर सकते। इतना ही नहीं सोमपान से उत्साहित अयास्या, अंगिरस, नवग्वा आदि ऋषिगण यहाँ पहुँच कर गायों के विशाल समूह को बाँटकर अपने पास ले जाएँगे। इस प्रकार तुम्हें दण्डित व अपमानित होना पड़ेगा।"

**"एह गमन्नृषय सोमशिता अयास्यो अंगिरसो नवग्वाः।**
**त एतपूर्वं वि भजन्त गोनामथैतद्वचः पणयो वमन्नित।।"**

- (10/108/18)

यह सुनकर भयभीत पणिगण ने साम-दाम-दण्ड-भेद की विधि से सरमा को समझाते हुए कहा- "यदि तुम देवताओं की शक्ति से पीड़ित की जाती हो तो हम तुम्हें अपनी बहन बनाते हैं। हे सौभाग्यवति! हम तुम्हें गायों का अलग हिस्सा देते हैं। तुम यहाँ से मत जाओ।"

पणिगण द्वारा कही गई उपर्युक्त बात को सुनकर सरमा ने निर्भीक भाव से कहा, "मैं तुम्हारे साथ भाई-बहन का नाता जोड़ने नहीं आई हूँ। मैं इतना ही जानती हूँ कि इन्द्र व अंगिरा जैसे देवगण आर्यों की गायों को लौटाना चाहते हैं? अतः तुमलोग अपनी जान को जोखिम में डाले बिना यहाँ से दूर भाग जाओ। जिनको बृहस्पति ने ढूँढ निकाला है तथा सोम ने पत्थरों ने व बुद्धिमान् ऋषियों ने जिनका पता लगाया है; छिपी हुई वे गाएँ चट्टानों के आवरण को तोड़ती हुई सत्य नियम के अनुकूल बाहर निकलें और आर्यों को पुनः प्राप्त हो जाएं।"

**"दूरमित पणयो वरीय उद् गावो यन्तु भिनतीऋर्तेन।**
**बृहस्पतिर्या अविन्दन्निगूळहाः सोमो ग्रावाण ऋषयश्च विप्राः।।"**

- (10/108/11)

उपर्युक्त प्रकार से सुघटित संवाद रोचक होने के साथ आकर्षक भी है। यह संवाद शास्त्रीय यज्ञ यागादि के अनुष्ठान की प्रेरणा देता है। यदि किसी प्रकार का विघ्न दैत्य, दानव, राक्षसों के द्वारा यज्ञादि का बाधक बनाया जाता है तो ऐसी परिस्थिति से विचलित हुए बिना मानव-समाज यज्ञपुरुष के आश्रित रहकर शास्त्र-विहित कर्मों का अनुष्ठान करता रहे। ऐसा करने से बाधाएँ दूर होती हैं। यजमान निज कल्याण के साथ प्राणिमात्र के कल्याण की उद्देश्य-पूर्ति में सफल होता है और वह भगवान का अनुग्रह-भाजन बनता है।

## 2.5 विश्वामित्र-नदी संवाद - (ऋग्वेद - 3/33)

**ऋषि = विश्वामित्र, नदी देवता = इन्द्र, नदियाँ (विपत्, शुतुद्री)**
**छन्द = त्रिष्टुप, पंक्ति, उष्णिक स्वर = पंचम, धैवत, ऋषभ**

कला से ओतप्रोत विश्वामित्र-नदी संवाद अतिशय रोचक शैली में ऋग्वेद के 3/33 में प्राप्त होता है। यह संवाद 13 (तेरह) मन्त्रों से आवेष्टित है। इन मन्त्रों में पञ्चनद प्रदेश (पंजाब) की विपाशा (व्यास) और शुतुद्री (सतलज) नदियों का मानवीकरण करने के साथ उनका व विश्वामित्र का पारस्परिक वार्तालाप प्रवाहमय एवं अतिशय कलात्मक ढंग से प्रस्तुत है।

सुदास नामक राजा के पुरोहित विश्वामित्र हैं। वे अपने यजमान की सेना के साथ व्यास व सतलज नदियों के संगम पर उपस्थित होकर नदियों से प्रार्थना करते हैं।

हे नदियों। आप दोनों बहनें झुक जाएँ जिससे हमारी सेना आसानी से नदी के पार जा सके।

**"प्र पर्वतानामुशती उपस्थादश्वे इव विषिते हासमाने।**
**गावेव शुभ्रे मातरा रिहाणे विपाट् छुतुद्री पयसा जवते।।"**

- (3/33/1)

मुनि विश्वामित्र विवाद् व शुतुद्री नदियों की स्तुति करते हुए कहते हैं- "आप दोनों बहनें पर्वतों की गोद से निकलती हैं और समुद्र की ओर जाना चाहती हैं। परस्पर की स्पर्धा से आप दोनों अपने जल के प्रवाह से अतिशय तेजी से बह रही हैं। जैसे दो घोड़ियाँ बेलगाम हों और आपसी प्रतिस्पर्धा में खुले मैदान में पूरे जोर-शोर के साथ दौड़ लगा रही हों, यह उपमान भी आप दोनों के वेगशील प्रवाह के समक्ष छोटा पड़ता है। जैसे दो गाएँ अत्यन्त शुभ्र वर्ण की हों और प्यार से अपने बछड़ों को स्नेहिल ढंग से चाट रही हों, उस प्रकार आप दोनों बहनों की शुभ्र जलधारा अपने जल प्रपातों से बछड़ों की तरह अपने दोनों तटों को स्नेहपूर्वक स्वच्छ करते हुए मानों चाट रही हो।"

ऋषि विश्वामित्र दोनों नदियों से प्रार्थना करते हुए कहते हैं कि आप दोनों इन्द्र द्वारा प्रेरित होकर दो रथियों की तरह समुद्र की ओर जा रही हो। लहरों से उमड़ती हुई एकसाथ जाती हुई तुममें से प्रत्येक एक दूसरे की ओर अतिशय वेग से बढ़ रही हो। मैं श्रेष्ठ नदी माता शुतुद्री को भी प्रणाम करता हूँ और सुन्दर पाट वाली विवाट् की भी स्तुति करता हूँ जो एक दूसरे से स्नेहिल उत्साह से पुनः पुनः आलिंगन करती हुई संगम का रूप धारण कर रही हैं। स्तुति सुनकर दोनों स्तुत्यप्रवाहमयी नदियाँ ऋषि द्वारा बार-बार की जाने वाली स्तुति का उद्देश्य पूछती हैं-

**"एना वयं पयसा पिन्वमाना, अनुयोनिं देवकृतं चरन्तीः।**
**न वर्तवे प्रसवः सर्गतवतः किंयुर्विप्रो नच्चो जोहवीति।।"**

- (3/33/4)

नदियों के द्वारा पूछे जाने पर ऋषि विश्वामित्र निवेदन करते हैं- "हे पवित्र जल वाली नदियों! मैं सोमरसाप्लावित स्तुति वचनों से प्रार्थना करता हूँ कि आप अपनी उद्दाम यात्रा को क्षण भर के लिये स्थगित कर लीजिए। आप हमारी सहायता करें जिससे हम, दोनों नदियों के उस पार जाने में समर्थ हो सकें।"

**"रमध्वं मे वचसे सोम्याय ऋतावरीरूप मुहूर्तमेवैः।**
**प्र सिन्धमच्छा बृहती मनीषा वस्युरहवे कुशिकस्य सूनुः।।"**

- (3/33/5)

ऋषिप्रवर विश्वामित्र के स्तुतिवचनों को सुनकर नदियों ने कहा, "हे विश्वामित्र! विशालबाहु पराक्रमी वज्रधारी इन्द्र ने उच्चावच पथरीले मार्ग को खोद-खोदकर हमारे प्रवाह को गतिशील बनाया है। हमारे जल को चारों ओर से घेर कर रोकने के इच्छुक वृत्रासुर को इन्द्र ने मार गिराया। सबके प्रेरक तेजोमय इन्द्र ने विशाल जलराशि हम नदियों को इस मार्ग से प्रवाहित होने की प्रेरणा दी है। इतना ही नहीं, प्रवाह को रोकने के लिये उद्यत अहि नामक असुर को इन्द्र ने वज्र प्रहार से आहत कर दिया। इस प्रकार, पराक्रमी इन्द्र के उद्योग से प्रवाहित हम, अपनी उत्तुंग जलधारा को भला कैसे वेगविहीन बनाएँ?"

**"इन्द्रो अस्माँ अरदद्वज्रबाहुरपाहन्वृत्रं परिधिं नदीनाम्।**
**देवोऽनयत्सविता सुपाणिस्तस्य वयं प्रसवे याम उर्वीः।।**

**प्रवाच्यं शश्वधा वीर्यं तद् इन्द्रस्य कर्म यदहिं विवृश्चत्।**
**वि वज्रेण परिषदो जघाना यन्नापोऽनमिच्छमानाः।।"**

-(3/33/6-7)

नदियों को प्रवाह कम करने की स्तुति अच्छी नहीं लगी। उन दोनों नदियों ने विश्वामित्र से कहा- "पुरुष के सापेक्ष यह हमें निम्न (अवर) कोटि में रखकर वेग और प्रवाह को कम करने की बात करना आपको शोभा नहीं देता। एक क्रान्तद्रष्टा कवि अपनी स्तुतियों में हमारे लिए पर्याप्त आदर रखें अत्यावश्यक है।"

**"एतद्वचो जरितर्मापि मृष्ठा आ यत्ते घोषानुत्तरा युगानि।**
**उक्थेषु कारों प्रति नों जुषस्व या नो नि कः पुरुषत्रा नमस्ते।।"**

- (3/33/8)

नदियों की उपर्युक्त आज्ञा को शिरोधार्य कर विश्वामित्र ने कहा, "हे सुन्दर बहनों! मुझ कवि भ्राता को अनुगृहीत करो। हम बहुत दूर से वाहन और रथ से चलकर आपके समीप आए हैं। रथ एवं बैलगाड़ी के अक्ष के नीचे आप दोनों अपने प्रवाहों को यदि नियन्त्रित कर लेती हैं तब हमलोग आसानी से आपके प्रवाहों के पार जा सकेंगे।" स्तुति करते हुए ऋषि विश्वामित्र जी ने बहनों के सहयोग की प्रार्थना की।

विश्वामित्र के विनम्र स्तुतिवचन को सुन-समझ कर नदियों ने आत्म-सम्मान को समझा और जिस प्रकार पीनस्तनी माँ अपने पुत्र के लिये झुकती है अथवा युवती अपने प्रियतम के लिये झुकती है उसी प्रकार अक्ष से नीचे झुककर रथ व शकट को नदी पार करने में विनम्रता के साथ पूर्ण सहयोग प्रदान किया।

**"आ ते कारो शृणवामा वचांसि ययाथ इरादनसा रथेन।**
**नि ते नंसै पीप्यानेव योषा मर्यायेव कन्या शश्वचै ते।।"**

- (3/ 33/10)

नदियों की कृपापूर्ण अनुमति प्राप्त कर भरतवंशी कृतज्ञता के साथ नदी-प्रवाहों को आसानी से पार कर गए। इस प्रकार नदियों का समर्थन विनम्र स्तुति से प्राप्त कर, विश्वामित्र जी ने यथावत् प्रकृष्ट रूप से प्रवाहित होने व पूर्ण रूप से भर जाने की प्रार्थना नदियों से की।

**"अतारिषुर्भरता गव्यवः स मभक्त विप्रः सुमतिं नदीनाम्।**
**प्र पिन्वध्वमिषयन्तीः सुराधा आ वक्षणाः पृणध्वं यात श्रीभम्।।"**

- (3/33/12)

विश्वामित्र नदी संवाद अतिशय रोचक ढंग से हमें रहस्यमय उपदेश प्रदान करता है। पर्वत, नदी, जल, वन एवं समस्त प्रकृति हम प्राणियों विशेष कर मानवों के लिये विशुद्ध परोपकार की भावना से, निःस्वार्थ भाव से सर्वविध सहयोग से उपकृत करती है। आवश्यकतानुसार, हमारे विनम्र स्तुतियों से समादृत होकर प्रकृति अपनी महिमा को भी नियन्त्रित कर सहयोग प्रदान करती है। हम जिस प्रकार अपनी माँ एवं बहन को स्नेह व सम्मान देते हैं उसी तरह, हमें प्रकृति का भी सम्मान करना चाहिए। वास्तविकता तो यह है कि हम मानव प्रकृति के अंग है। प्रकृति व पर्यावरण की स्वच्छता व स्वस्थता पर ही हमारी स्वच्छता व स्वस्थता निर्भर करती है।

## 2.6 सारांश

प्रिय विद्यार्थियों। इस इकाई में आपने पुरुरवा-उर्वशी संवाद, यम-यमी संवाद, सरमा-पणि संवाद

एवं विश्वामित्र-नदी संवाद के स्वरूप एवं वैशिष्ट्य का ज्ञान अर्जित किया है। यह सुविदित है कि वेद आदि संस्कृति के ज्ञान-विज्ञान, कला, शिल्प आदि के विषयों में मूलभूत स्रोत है। चतुर्विध वेद ईश्वरीय ज्ञान होने के साथ प्राचीन ऋषियों की ऋतम्भरा प्रज्ञा से परिदृष्ट है।

पुरुरवा-उर्वशी संवाद में एक मानव राजा अप्सरा के साथ दाम्पत्य जीवन में चार वर्षों को व्यतीत करता है। शर्त के अनुपालन में उर्वशी का पुरुरवा से वियोग होता है। इस वियोगावस्था में पुरुष अधीर दिखता है किन्तु स्त्री स्वयं को निश्चित पाती है। वियोग को ध्रुव प्रतिपादित करती हुई उर्वशी जन्म लेने वाले अपने पुत्र दो पुरुरवा के पास भेजकर उसके कल्याण-भाव को अपने आशीर्वचन से पुष्ट करने का वचन देती है। सन्तान परम्परा को सुरक्षित रखने हेतु गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना सार्थक होता है। विशेषकर, प्रजा की रक्षा करने हेतु राजा के द्वारा सन्तति को जन्म देना विराट उद्देश्य होता है जिसकी सम्पूर्ति दाम्पत्य प्रेम के साथ कुशल राजपुत्र की निर्मिति से सुघटित होती है।

द्वितीय यम-यमी संवाद में यदृच्छा से चंचल मनोवृत्ति को आदर देना यमी की उक्ति में प्रतिबिम्बित है। इसके विपरीत, शास्त्र के विधि-निषेध का आदर करते हुए लोक-मंगल का विवेक के साथ आदर करना यम की उक्ति में सुस्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित है। यमी का उच्छृंखल भाव पराहत होता है तथा यम का संयमित सदाचार पूर्णतया समादृत होता है। इस द्वितीय संवाद में सदाचार की स्थापना मुख्य उद्देश्य है जिसकी पूर्ति अच्छी तरह से सम्पन्न हुई है।

सरमा-पणि संवाद आर्य एवं अनार्य की मनोवृत्तियों को केन्द्र में रखकर विनिर्मित हुई है। पणिगण ऐसे अनार्य हैं जो यज्ञादि कर्म के निमित्त ऋषियों के पास विद्यमान गायों का अपहरण कर उन्हें दुर्गम, दूरस्थ पर्वतों के अन्दर छिपा देते हैं और किसी कीमत पर उन्हें लौटाने को तैयार नहीं होते। आर्यों के अभिभावक इन्द्र यज्ञ-यागादि के चारु सम्पादनार्थ अपनी दूती 'सरमा' को दुर्गम मार्गों के माध्यम से पणिगण तक पहुँचने में प्रेरणा एवं सहयोग प्रदान करते हैं। पणिगण सरमा को साम-दाम-दण्ड-भेद से प्रलोभन देते हुए गायों को लौटाना नहीं चाहते किन्तु बुद्धि-विवेक के बल पर सरमा पणिगण को अपनी युक्तियों द्वारा पराजित कर गायों को ऋषियों के पास यथावत पहुंचाने में सफल होती है। इस तृतीय संवाद से कला-कौशल एवं मधुरिमा के साथ यह प्रबोधन प्राप्त होता है कि हमें आर्य-पद्धति से अपने जीवन को समुन्नत करना चाहिए। यदि किसी भी प्रकार का विघ्न उपस्थित होता है तो उसका परिहार देवगण के द्वारा अत्यन्त आसानी से हो जाता है।

चतुर्थ विश्वामित्र-नदी-संवाद में एक उत्कृष्ट मन्त्रद्रष्टा ऋषि आध्यात्मिक बल से अत्यन्त समृद्ध है। व्यावहारिक धरातल पर एक राजा का पुरोहित होने से जन-बल, धन-बल के साथ मार्ग की दो नदियों को पार करना उनका अभीष्ट है। एतदर्थ वे अपने मन्त्र-बल का प्रयोग नहीं करना चाहते, अतः नदियों से विनम्रतापूर्वक स्तुति-प्रार्थना करते हैं। स्त्री-प्रकृतिक प्रकृति का संबहुमान, बहन एवं माँ की तरह सम्मान देने वाले विश्वामित्र ऋषि के सामने उद्दाम प्रवाह वाली नदियाँ (शुतुद्री व विपाट्) अपने प्रवाह को इस तरह से नियन्त्रित कर लेती हैं जिससे रथ व शकट पर आरूढ़ सभी लोग आसानी से नदियों को पार कर लेते हैं। इसके पश्चात कृतज्ञता वचन के द्वारा प्रकृति को आदर देना और प्राणिहित में नदियों का पुनः पूर्ण प्रवाह से समृद्ध होने की स्तुति से संवाद का पूर्ण होना हमें शिष्टाचार सिखाता है।

## 2.7 शब्दावली

| | | |
|---|---|---|
| न्यवसत् | = | निवास किया |
| धर्मं चचार | = | धर्माचरण किया |
| निषेवे | = | सेवन किया |
| वष्टि | = | चाहता है |
| उशती | = | कामना करती हुई |
| विषिते | = | खुले लगाम वाली |
| प्रजवते | = | तेजी से वह रही है |
| इन्द्रेषिते | = | इन्द्र भेजी गई |
| भिक्षमाणे | = | प्रार्थना करती हुई |
| याथः | = | जा रही हो |
| एति | = | जा रही है |
| उक्थेषु | = | स्तुतियों में |
| दृशीका | = | दृष्टि |
| शयध्वे | = | सो जाओगे |
| स्वसारम् | = | बहन (कर्म) |
| सिन्धवः | = | नदियाँ |
| सन्तरेयुः | = | पार करेंगे |

## 2.8 सन्दर्भ-ग्रन्थ


1. द न्यू वैदिक सिलेक्शन, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी
2. ऋग्वेद संहिता (सायण भावय), राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नई दिल्ली
3. संस्कृत यू.जी.सी नेट, गिरिधर गोपाल शर्मा, (चौखम्बा प्रतियोगिता प्रकाश), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
4. नवीनवैदिकसञ्चयनम्, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
5. ऋग्वेदभाष्य भूमिका, आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा, वाराणसी
6. वैदिक साहित्य का इतिहास, डॉ. गजानन शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी


## 2.9 बोध प्रश्न

1. उर्वशी के वैशिष्ट्य का प्रतिपादन करें।
2. यम के सदाचार एवं विवेक पर प्रकाश डालें।
3. सरमा के बुद्धि-कौशल को रेखांकित करें।

4. विश्वामित्र के व्यवहार-कौशल को प्रतिपादित करें।
5. संवाद- सूक्तों की विशेषता को निरूपित करें।
6. पुरुरवा-उर्वशी संवाद के रहस्य को उद्घाटित करें।
7. यम-यमी संवाद के सारतत्त्व को बताएँ।
8. सरमा-पणि संवाद की विशेषताओं को लिखें।
9. विश्वामित्र-नदी संवाद के आधार पर नदी के स्वरूप को रेखांकित करें।



ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY